एक थाल मोतियों भरा

जयप्रकाश भारती

एक थाल मोतियों भरा

(जीवन-निर्माण की प्रेरक कथाएं)

जयप्रकाश भारती

नया साहित्य

मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली

मूल्य : तीस रुपये (Rs. 30.00)

संस्करण : 2010 © नया साहित्य
ISBN : 978-93-80300-12-2
EK THAL MOTIYON BHARA (Short Stories)
by Jayprakash Bharati

नया साहित्य, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110 006

पाठकों से

तेईस लाख पाठकों ने इन कहानियों को पढ़ा है
लेकिन आपने नहीं
यदि आपने ये कहानियाँ पढ़ी हैं तो भी
यह पुस्तक आपके लिए है।

क्योंकि ये जीवन-निर्माण की कहानियां हैं।
जिन्हें बार-बार पढ़ना चाहिए
और दूसरों को पढ़वाना भी चाहिए।

जीवन की राह को जगर-मगर करने वाली
ये कहानियां "नंदन" के पाठकों के लिए खास तौर से
लिखी गईं। और अखिल भारतीय सर्वेक्षण के अनुसार
उस पत्रिका के पौने चौबीस लाख पाठक हैं।

हजारों पत्र आते रहे, पाठक इन कहानियों को सराहते रहे।
उनकी यह मांग भी बनी रही कि ये एक साथ, एक
पुस्तक में उपलब्ध हों।

ये कहानियां आठ साल से अस्सी साल तक के पाठकों
के लिए हैं क्योंकि आशा और विश्वास की जोत जगाती हैं।
निराशा के अंधेरे को दूर भगाती हैं।
आप भी पढ़िए और हीरे-मोती जैसी ओस की इन
बूंदों में अपने को भिगो लीजिए !

– जयप्रकाश भारती
सम्पादक–"नंदन"

क्रम

रसगुल्ला बाबू	5
तारे ला दो	8
राजधानी में रोशनी	12
दामा जी का चाकर	16
बालक गुरु बना	20
अनाथ के नाथ	24
विराध से मुठभेड़	28
राजकुमारी खो गई	32
कुआँ नहीं सूखता अब	36
आलसी अलादीन का दीपक	40
गले का हार	44

रसगुल्ला बाबू

रसगुल्ला बाबू का नाम सुना है कभी ? नहीं ना ! वह रसगुल्ले खाते नहीं थे, बनाते थे। और बनाते थे बेजोड़ रसगुल्ले। उनकी दुकान पर रसीले रसगुल्ले बने नहीं कि ग्राहक टूट पड़ते। देखते ही देखते सब खत्म। खूब कमाई की रसगुल्ला बाबू ने। एक दिन वह था कि उनके पास परिवार का पेट भरने को भी कुछ न था।

रसगुल्ला बाबू इसका श्रेय देते हरिहर बाबा को। हरिहर बाबा जो काशी में गंगा तट पर बसे नगवा में रहते थे।

एक दिन एक जमींदार काशी यात्रा को आए। उनके साथ युवक श्रीश भी था। जमींदार हरिहर बाबा के दर्शनों को आते रहते। वह तो लौट गए, पर श्रीश बाबा के पास ही रहता रहा।

हरिहर बाबा को एक दिन पता चला कि श्रीश अकेला नहीं है। उसका परिवार भी है। वह बोले–"तू अपनी जिम्मेदारी नहीं निभाता। पत्नी और बच्चों को छोड़कर यहां तीरथ करने आया है। आगे से आना तो उन्हें लेकर, वरना मत आना।"

श्रीश गिड़गिड़ाकर बोला–"रोजगार कुछ है नहीं। उन्हें कैसे ले आऊं ?"

बाबा ने कहा–"यहां मिठाई की दुकान खोल ले। रुपए मुझसे

ले जा।"

मिठाई की दुकान खुली। तरह-तरह की मिठाइयां बनतीं, पर रसगुल्ले खास तौर से मशहूर हुए। श्रीश को ही लोग रसगुल्ला बाबू कहने लगे। वह रोज हरिहर बाबा को मिठाई पहुंचाया करता।

पर अनोखे थे हरिहर बाबा। वह सब मिठाई बांट दिया करते। उनके चमत्कारों के कितने ही किस्से सुनने में आते थे। किसी का काम बन जाता, तो बाबा कुछ लेते न थे। बस कहते कि भंडारा कर दो। भूखों को भोजन करा दो। जरूरतमंदों को कपड़े बांट दो। दीन-दुखी आते ही रहते। रोते हुए आते और खुशी-खुशी जाते।

एक दिन नगवा में शोर मच गया। काशी नरेश का एक बूढ़ा हाथी पागल होकर उपद्रव मचाने लगा। लोग हैरान-परेशान। हाथी चिंग्घाड़ता हुआ नदी में कूद पड़ा। तैरता-तैरता तुलसी घाट पर आ गया। हरिहर बाबा वहां ध्यान में बैठे थे। देखने वाले सोच में पड़ गए—क्या करें? वे भयभीत हो गए। पर बाबा तो हिले-डुले भी नहीं। तभी लोगों ने देखा कि हाथी एकदम शांत हो गया। उसने सूंड में जल लेकर वहां छिड़क दिया। बाबा की समाधि खुली, तो उन्होंने आशीर्वाद में हाथ उठा दिया।

हाथी बिना किसी गड़बड़ी के वहां से शांत लौट गया।

हरिहर बाबा जैसे कितने ही संत देश में हुए हैं। उन्होंने दूसरों के दुख दूर करने में ही जीवन लगा दिया।

तारे ला दो

एक था राजा, एक थी रानी। एक थी उनकी राजकुमारी। अकेली बेटी थी, इसलिए लाड़ली थी। धीरे-धीरे राजा-रानी का अधिक लाड़-प्यार रंग लाया। राजकुमारी रीमा मनमानी करने लगी। वह जो चाहती, वही होना चाहिए।

एक बार रीमा का जन्मदिन था। कितने ही उपहार आए–एक से एक कीमती। राजकुमारी के पास पहले से ही किसी चीज की कमी न थी। बोलने वाली गुड़िया किसी ने लाकर दी। रीमा ने कहा–"इससे बढ़िया तो कई गुड़ियाँ मेरे पास हैं।" किसी ने कामदार जूते दिए, तो किसी ने जरी के कपड़े। पर रीमा ने किसी भी उपहार को पसंद नहीं किया। बार-बार पूछा गया–"क्या चाहिए राजकुमारी जी ?"

रीमा ने आसमान के सितारों की तरफ अंगुली उठा दी। बोली–"मुझे दमकते हुए वे तारे चाहिए जिनसे मैं गले का हार बनवा सकूं।" आसमान के तारे तोड़कर कौन लाता, कैसे लाता ! वह नाराज होकर अपने कमरे में जा बैठी–गुमसुम-गुमसुम।

मेहमान आए, शानदार दावत हुई, पर राजकुमारी कमरे से बाहर नहीं आई। रात का एक पहर ढला। तभी राजकुमारी के कमरे में

हलचल हुई। तेज हवा के झोंके आए। आवाज सुनाई दी–"राजकुमारी, तुम सितारों का हार चाहती हो न ?"

–"हां, हां, मुझे आसमान के दिप-दिप करते तारे चाहिए।"

–तो गरम पकड़े पहन लो। जूते पहन लो और चलो मेरे साथ..."

राजकुमारी झटपट तैयार हो गई। ठंडी हवा उसे अपने साथ ले चली। राजकुमारी शायद उड़ी जा रही थी। पहाड़ पर जा पहुंची। ठंड खूब बढ़ गई थी। पर आसमान के तारे अब भी दूर थे, बहुत ही दूर।"

राजकुमारी बोली–"ओह, तारे कैसे चमचमा रहे हैं, पर उन तक कैसे पहुंच पाऊं।"

"नीचे देखो राजकुमारी। नीचे की ओर।"–आवाज आई। राजकुमारी ने नीचे देखा। नीचे तो जगमग-जगमग हो रही थी। ऊपर भी जगमग थी। सितारे नीचे थे और ऊपर भी। राजकुमारी पहाड़ी ढलान पर तेजी से फिसलने लगी। घिसटने से उसके कपड़े फट गए। हाथ छिल गए। वह पहाड़ की तलहटी में पहुंच गई। उसे नहीं मालूम था कि झील जमी हुई थी। जमी झील में तारों की छाया, असली तारों का आभास दे रही थी। उसने तारों को पकड़ना चाहा, पर निराशा ही हाथ लगी।

बर्फ गिरने से ठंड बढ़ती जा रही थी। राजकुमारी को कंपकंपी छूटने लगी। उसे अपनी नासमझी पर गुस्सा आया। मां-बाप के प्यार को उसने नहीं समझा। जन्मदिन की खुशियों को छोड़, अकेली घर से बहुत दूर चली आई। अपनी मूर्खता पर उसकी आंखों से आंसू ढुलक पड़े। सर्दी में वे आंसू जम गए। कीमती मोती बन गए। हार बनकर वे राजकुमारी के गले में चमकने लगे।

तभी कुछ हलचल हुई। हवा रुक गई। ठंड कम हो गई। एक राजकुमार वहां आया। बोला–"मैं हवाई तूफान का बेटा हूँ। तुमने मां-बाप के प्यार को नहीं समझा। तुमने किसी के उपहार की कद्र नहीं की। पर तुम्हें अपने हटीलेपन का पछतावा हुआ है। चलो, तुम्हें वापस महल में छोड़ आऊं।"

रीमा चुपचाप राजकुमार के साथ महल में लौट आई। उस दिन से रीमा एकदम बदल गई।

बस, अपने लिए नहीं, सबके साथ-साथ जीना ही सुख है। अब रीमा को सब पसंद करते।

राजधानी में रोशनी

डेढ़ हजार साल पहले—चंद्रगुप्त विक्रमादित्य भारत के राजा थे। तभी प्रसिद्ध चीनी यात्री फाहियान यहां आया। कितने ही बौद्ध ग्रंथ यहां से ले गया। उन्हीं दिनों चीनी सम्राट के निमंत्रण पर एक भारतीय चीन की राजधानी पहुंचा था। चांगान पहुंचने पर उसका धूमधाम से राजकीय ढंग से स्वागत किया गया। चीन के सम्राट ने उसे राष्ट्र गुरु (कुओ-शिह) की उपाधि देकर सम्मानित किया। उस महापुरुष का नाम था कुमारजीव।

कुमारजीव की कथा अनोखी है। उनके पिता कुमारायण एक भारतीय रियासत में थे। मंत्री बनने का अवसर आया, तो वह बौद्ध भिक्षु बन गए। यात्रा पर निकल पड़े। घूमते-घूमते मध्य एशिया के कूचा शहर में जा पहुंचे। वहां के राजा ने कुमारायण का स्वागत किया। उन्हें राजगुरु बना लिया। राजा की बहन जीवा के साथ उनका विवाह हो गया। पहले पुत्र का नाम ही "कुमारजीव" हुआ।

कुमारजीव बचपन से ही बड़े होनहार थे। मां ने उन्हें धर्म-ग्रंथों का पाठ करना सिखाया। फिर मां अपने बेटे को कश्मीर लेकर आई। वहां उसने आचार्य बंधुदत्त से शिक्षा ली। खासकर बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन किया। कश्मीर से लौटते हुए कुमारजीव कई नगरों में गए।

उन्होंने वेदों और भारतीय दर्शन के बारे में अपना ज्ञान बढ़ाया।

बीस वर्ष के कुमारजीव कूचा वापस पहुंचे। वहां राजमहल में उन्होंने दीक्षा ली। भिक्षु बन गए। अगले बीस बरस वे वहीं रहे। उन दिनों कूचा में मंदिर और मठ दस हजार थे। सबसे बड़े मठ में कुमारजीव धर्म का उपदेश दिया करते। सैकड़ों मील दूर से भी लोग वहां आया करते। कूचा नगर उन दिनों भारतीय संस्कृति और बौद्ध धर्म के प्रचार का बड़ा केन्द्र था।

दूर-दूर तक कुमारजीव की कीर्ति फैल गई। चीन भी अछूता नहीं रहा। वहां के राजा फूचियेन ने उन्हें अपने यहां बुलाना चाहा। पर वह सफल नहीं हुआ। फूचियेन ने अपने सेनापति को भेजा।

कूचा जीतने के बाद कुमारजीव को बंदी बना लिया गया। लियांग चाऊ ने कुमारजीव को सत्रह बरस तक नजरबंद रखा। यह नजरबंदी कुमारजीव के लिए वरदान बन गई। इस समय उन्होंने चीनी भाषा का जमकर अध्ययन किया। बाद में संस्कृत ग्रंथों का चीनी में अनुवाद करते हुए यह पढ़ाई उनके बहुत काम आई।

चीन में शासन बदला। चीन के नए सम्राट याओहसिंग ने कुमारजीव की नजरबंदी खत्म करने को सेना भेजी। कुमारजीव के आने पर राजधानी में रोशनी की गई। सम्राट ने अपने राजसी उद्यान में उन्हें रहने को कहा। आठ सौ विद्वान भिक्षु कुमारजीव को सौंपे गए। कुमारजीव धर्म ग्रंथों का अनुवाद करने लगे। उन्होंने सहज-सरल भाषा में तीन सौ ग्रंथों का अनुवाद किया। कई ग्रंथ स्वयं भी लिखे। आज भी उनके ग्रंथ शुद्ध और प्रामाणिक माने जाते हैं।

सम्राट की इस काम में विशेष रुचि थी। कई बार वह स्वयं पोथी हाथ में लेकर कुमारजीव के चरणों में बैठता। रोज भिक्षु संघ की बैठक

जुड़ती। उसमें कुमारजीव मूल पाठ करते। फिर चीनी अनुवाद करते। अनेक विद्वान अपनी-अपनी राय देते। कई बार एक ही वाक्य का अनुवाद करने में घंटों बीत जाते।

चीन के कोने-कोने से विद्वान और युवक कुमारजीव के पास आते। वे उनके शिष्य बनकर धन्य हो जाते। तीन हजार से अधिक उनके शिष्य थे।

परिश्रम, प्रतिभा और ज्ञान का जो ध्वज कुमारजीव ने फहराया, वह आज भी लहरा रहा है। भारत ने कभी किसी पर हमला नहीं किया। हमेशा सुख-शांति और ज्ञान का संदेश फैलाया।

दामाजी का चाकर

कई सौ साल पहले महाराष्ट्र में भयंकर अकाल पड़ा। मंगलबेड़या प्रांत का शासन दामाजी पंत चलाते थे। वह और उनकी पत्नी ईश्वर के भक्त थे। दीन-दुखियों की हमेशा सहायता करते।

अकाल के कारण लोग त्राहि-त्राहि कर रहे थे। उधर राज्य के भंडार अन्न से भरे थे। दामाजी पंत ने आदेश दिया –''भंडार घर के ताले खोल दिए जाएं। जरूरतमंद और भूखों को मदद दी जाए।''

अनाज पाने के लिए लम्बी-लम्बी कतारें लग गईं। सभी को मुफ्त अनाज दिया जाने लगा। इससे हजारों लोग मौत के मुंह में जाने से बच गए। लेकिन दामाजी के नायब सूबेदार ने यह अच्छा अवसर समझा। उसने सोचा–''यदि दामाजी को हटवा दूँ, तो मैं सूबेदार बन जाऊंगा।'' बस, उसने बढ़ा-चढ़ाकर दामाजी की शिकायत बादशाह को लिख भेजी।

बादशाह को नायब सूबेदार का पत्र मिला। वह आपे से बाहर हो गया। उसने तुरंत सेनापति को हुक्म दिया–दामाजी को गिरफ्तार करके हमारे सामने हाजिर करो।

सैनिक लेकर सेनापति चल दिया। दामाजी के घर पहुंचा। द्वार पर जोर-जोर से दस्तक दी। उनकी पत्नी ने द्वार खोला। सेनापति

से बोलीं–"दामाजी पूजा में हैं। पूजा खत्म होने पर ही आप उनसे मिल सकेंगे।"

सेनापति प्रतीक्षा करने लगा। दामाजी की पूजा खत्म हुई। पत्नी ने उन्हें सेनापति और सैनिकों के आने की खबर दी। दामाजी भांप गए कि बादशाह ने उन्हें गिरफ्तार करने भेजा है। वह तनिक भी घबराए नहीं। उन्होंने पत्नी से कहा–"तुम्हें चिंता करने की जरूरत नहीं। हमने कोई चोरी नहीं की। असहाय और दीन-दुखियों की मदद की है। भगवान पांडुरंग जैसा चाहेंगे, वैसा करेंगे।"

दामाजी बाहर आए। सेनापति ने बादशाह का हुक्म सुनाया। उन्हें बंदी बनाकर ले चला।

बीदर का बादशाह कैदी दामाजी की राह देख रहा था। देर होती देख, वह आगबबूला हो रहा था। तभी उसने देखा कि एक किशोर दरबार में चला आ रहा है। उसने कायदे से जोहार की। फिर बोला–"हुजूर, मैं दामाजी का चाकर हूँ।"

बादशाह चौंक उठा। गुस्से में उससे पूछा–"क्या नाम है तेरा ?"–यहां क्यों आए हो ?"

किशोर ने नम्र होकर कहा–"जी सरकार नाम है बिट्ठु। क्षमा करें। आपकी प्रजा भूखी मर रही थी। मेरे स्वामी ने आपके कोठार का अन्न उन्हें बांट दिया। उसी की कीमत चुकता करने आया हूं।"

बादशाह ने बिट्ठु को खजांची के पास भेज दिया। उसने पूरे रुपये लेकर रसीद दे दी।

बिट्ठु फिर बादशाह के पास आया। बादशाह ने रसीद पर शाही मुहर लगा दी। बिट्ठु ने हाथ जोड़े और बोला–"सरकार, चलूँगा। स्वामी चिंता करते होंगे।"

बादशाह पर घड़ों पानी पड़ गया। उसने दीवान को हुक्म दिया कि जाओ और दामाजी को आदर के साथ लेकर आओ।

चलते-चलते दामाजी पंत पंढरपुर से आगे निकल आए थे। उन्होंने सवेरे पूजा-पाठ किया। गीता–पुस्तक खोली, तो उसमें एक कागज मिला। यह वही रसीद थी। दामाजी को हैरानी हुई। तभी देखते क्या हैं कि दीवान चला आ रहा है। उसने बादशाह का हुक्म सुनाया और दामाजी से माफी मांगी।

बादशाह के पास पहुंचे दामाजी। बादशाह बोला–"दामाजी, मुझे एक बार फिर बिट्ठु से मिलवा दीजिए।"

दामाजी बोले–"हुजूर, कौन बिट्ठु ?"

बादशाह ने नम्र होकर कहा–"दामाजी, आप छिपा रहे हैं। मुझे किसी भी तरह उससे एक बार मिलवा दीजिए।"

दामाजी की अब समझ में आया। बोले–"हुजूर आपको तो स्वयं प्रभु ने दर्शन दे दिए। आप धन्य हैं।" दामाजी वहीं कीर्तन करने लगे।

भक्त के लिए प्रभु दौड़े चले आते हैं। उनकी लीला को कौन समझ सका है !

बालक गुरु बना

ऋषि दधीचि बड़े तेजस्वी थे। उनका राजा छू से झगड़ा हो गया। दधीचि ने राजा के सिर पर हाथ मारा। राजा छू ने वज्र से उनका शरीर टुकड़े-टुकड़े कर डाला। शुक्र वहां प्रकट हुए। उन्होंने दधीचि के शरीर को जोड़ा। उन्हें एक तरह से नया जीवन दिया। पर दधीचि अपने अपमान को भूले नहीं। उन्होंने इससे सबक सीखा। तय किया कि वह शरीर को ऐसा बना लेंगे कि वज्र की मार भी सह सके।

दधीचि ने शिव के लिए तप शुरू कर दिया। दिनों-दिन कठोर से कठोर तप वह करते गए। इंद्र का सिंहासन डोल उठा। दधीचि को उन्होंने तरह-तरह के फल-फूलों से रिझाना चाहा। पर दधीचि अपने तप पर अटल बने रहे। इंद्र की एक अप्सरा थी अलंबुषा। इंद्र ने दधीचि का तप भंग करने के लिए उसे भेजा। उसने ऋषि दधीचि का ध्यान भंग कर दिया।

सरस्वती नदी के तट पर ऋषि तप कर रहे थे। थोड़ी बाधा के बाद वह फिर से अपनी तपस्या में लीन हो गए। शिव प्रसन्न हुए। दधीचि को वर दिया कि उनकी हड्डियां वज्र जैसी कठोर हो जाएंगी।

एक दिन सरस्वती दधीचि के पास आई। एक बालक को आगे करके ऋषि को याद दिलाया—"यह आपका पुत्र है। अब तक मैं

इसका पालन-पोषण करती रही। अब आप इसे ज्ञान दीजिए।''

दधीचि प्रसन्न हुए। पुत्र का माथा सूंघा। सरस्वती को वर दिया–''कठिन समय में देवता, गंधर्व तथा अन्य तुम्हारे आश्रय पर रहेंगे।'' बालक को आशीर्वाद देते हुए बोले–''तुम संसार को ज्ञान दोगे।'' पुत्र सारस्वत को लेकर चली गई–सरस्वती।

वृत्र नामक असुर के उपद्रव से सारा संसार भयभीत हो उठा था। देवता ब्रह्मा जल की शरण में गए। उन्होंने बताया कि ऋषि दधीचि की शरण में जाने पर ही कुछ सफलता मिल सकती है। दधीचि ने अपनी अस्थियों का दान दिया। दधीचि की अस्थियों से वज्र बनाया गया। उसके प्रहार से वृत्र का नाश हुआ। पर अस्थियों से बने शस्त्रों का प्रयोग तो उचित न था। वर्षा होनी बंद हो गई। एक-दो बरस नहीं, लगातार बारह बरस तक जल नहीं बरसा। कैसा हाहाकार मचा होगा। सब लोग इधर-उधर भटक-भटक कर जैसे-तैसे भोजन जुटाते रहे। भूख में भजन-पूजन न हो पाता। वेदों का पठन-पाठन ही बंद हो गया। पर सरस्वती में जल बहता रहा। बहुतों की प्यास शांत होती रही।

सारस्वत ही एकमात्र मुनि बालक थे, जिन्हें भोजन की चिंता न करनी पड़ी। सरस्वती उन्हें जल तो देतीं ही, खाने के लिए भी कुछ-न-कुछ देतीं। सारस्वत अपने नित नियम में ढील न देते। पठन-पाठन चलता रहा उनका।

समय बदला। अकाल का काल मिटा। पर इस अवधि में ब्राह्मण अपनी विद्या ही भूल बैठे थे। बालक सारस्वत, साठ हजार ब्राह्मणों के गुरू बने। उन्होंने विधिपूर्वक उन्हें वेदों का उपदेश दिया। दियासलाई की तीली फट से रगड़ने पर दप्प से रोशनी कर देती है।

उससे चाहे जितने दीपक जल सकते हैं। घिरे अंधेरे में उस बालक ने रोशनी की लकीर चमकाई थी, जो आज भी झिलमिला रही है।

उस ज्ञान देवता को नमन !

अनाथ के नाथ

पांड्य राज्य की राजधानी मदुरै थी। वहां के प्रतापी राजा थे पुण्यनिधि। उनके राज्य में सारी प्रजा सुखी थी। पुण्यनिधि खूब दान देते, यज्ञ करते। समय-समय पर तीर्थ-यात्रा भी करते थे।

एक बार पुण्यनिधि ने राज्य का भार पुत्र को सौंप दिया। उन्होंने सेतुबंध रामेश्वर की यात्रा करने का निश्चय किया। अपने परिवार तथा लाव-लश्कर के साथ पुण्यनिधि वहां जा पहुंचे।

राजा पुण्यनिधि स्नान-ध्यान और दान आदि करके वहां से लौटने लगे। राह में उन्हें एक सुंदर कन्या मिली। उन्हें लगा जैसे उनकी अपनी ही बेटी हो। बोले—"बेटी, तुम कौन हो ? यहां किसलिए आई हो ?"

कन्या ने कहा—"मैं अनाथ हूँ। आपकी पुत्री बनने आई हूँ। आपके साथ महल में रहूँगी। लेकिन एक शर्त है—यदि कोई बलपूर्वक मेरा हाथ पकड़ लेगा या छेड़ेगा तो आप उसे दंड देंगे।"

राजा बोले—"बेटी, तुम जो कह रही हो, मैं वह सब करूंगा। वैसे भी घर में कोई बेटी नहीं है, एक बेटा है। तुम अंतःपुर में मेरी रानी के साथ रहना। जब तुम विवाह के योग्य हो जाओगी, तो जैसा चाहोगी, वैसा ही मैं करूंगा।"

कन्या उनके साथ ही राजधानी चली आई। पुण्यनिधि की रानी थी विंध्यावली। राजा ने विंध्यावली से कहा–"अब यह हमारी बेटी है।"

रानी ने बड़े प्रेम से उस कन्या का हाथ पकड़ लिया। अपनी बेटी मानकर ही उसका पालन-पोषण करने लगी।

कन्या एक दिन महल के उद्यान में फूल चुन रही थी। साथ में कई सखियां थीं। आपस में हंसी-ठिठोली कर रही थीं। तभी वहां एक ब्राह्मण आया। उसके शरीर पर भस्म और माथे पर त्रिपुंड लगा था। उसने झट से कन्या का हाथ पकड़ लिया। कन्या चिल्ला उठी। उसकी सखियां भी घबरा गईं। क्षण भर में ही कई सैनिक वहां आ गए। राजा पुण्यनिधि भी पहुंच गए। उन्होंने पूछा–"बेटी, तुम क्यों चिल्ला रही थीं।"

कन्या की आंखों में आंसू थे। दुखी स्वर में बोली–"पांड्यनाथ, इस ब्राह्मण ने मेरा हाथ पकड़ लिया। देखिए, अब भी निडर होकर पेड़ के नीचे खड़ा है।"

अपना दिया वचन राजा पुण्यनिधि को याद हो आया। उन्होंने सैनिकों को आज्ञा दी। ब्राह्मण को पकड़ लिया गया। हथकड़ी-बेड़ी पहनाकर रामनाथ मंदिर में डाल दिया गया।

रात हुई। पुण्यनिधि ने सपने में देखा कि जिस ब्राह्मण को कैद में डाला गया था, वह तो साक्षात भगवान हैं। चार हाथों में शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किए हैं। साथ ही राजा की वह कन्या खिले हुए कमल पर बैठी लक्ष्मी हैं। अब राजा को भला नींद कहां।

राजा झट से उठे और कन्या के पास गए। वहां कन्या को महालक्ष्मी के रूप में पाया। प्रणाम करके उनके साथ ही रामनाथ मंदिर में गए। वहां ब्राह्मण को भी साक्षात विष्णु के रूप में पाया। हाथ

जोड़कर खड़े हो गये। कहने लगे–"मैंने अनजाने में यह अपराध किया है। मुझे क्षमा कर दीजिए।"

पुण्यनिधि की प्रार्थना सुनकर भगवान बोले–"राजन, मैं तो स्वभाव से ही भक्तों के वश में हूँ। तुमने कोई अपराध नहीं किया। तुम्हारी भक्ति की परीक्षा के लिए ही, यह सब किया गया। अनाथ की रक्षा किस प्रकार करनी चाहिए, यह तुमने दिखा दिया। अनाथ बालिका के रूप में होने पर भी तुमने इन्हें घर में रखा और सेवा की। मैं बहुत प्रसन्न हूँ।"

श्रीहरि ने राजा से कहा–"राजन्, तुमने जो मुझे बांधा है, मैं इससे छूटना नहीं चाहता। इसकी स्मृति सदा बनी रहे, इसलिए मैं अब यहां इसी रूप में निवास करूंगा। मेरा नाम "सेतुमाधव" होगा।" इतना कह प्रभु अंतर्धान हो गए। यह कथा हमसे गुपचुप बहुत कुछ कह देती है, क्या भला ?

विराध से मुठभेड़

बनवास में सीता, राम और लक्ष्मण चित्रकूट से आगे चले। घने जंगल में बढ़ते गए। चलते-चलते एक आश्रम के निकट पहुंचे। वहां मुनियों ने इनका स्वागत किया। कहने लगे–"राजभवन में रहो या वन में, हम तो आपको ही राजा मानेंगे।" तीनों ने रात वहीं बिताई। अगले दिन बड़े सवेरे ही आगे बढ़ चले।

आगे-आगे और भी भयंकर जंगल था। हिंसक जानवरों तथा पशु-पक्षियों से भरा हुआ था। तभी अचानक कुछ आवाज-सी सुनाई दी। तीनों सावधान हो गए। पहाड़ जैसे शरीर वाला एक भयंकर राक्षस सामने आकर खड़ा था। उसके हाथ खून से सने थे। वह गरजकर बोला–"अरे छोकरो, तुम कौन हो ? ऋषियों जैसा वेश बनाकर पाखंड रचाए हो। हाथ में शस्त्र भी लिए हो और साथ में एक युवती है। जानते हो, मैं कौन हूँ ? मैं महाबली राक्षस विराध हूँ। यज्ञ करते ऋषि-मुनि मेरे डर से भाग खड़े होते हैं। फिर भी मैं उनको छोड़ता नहीं, मारकर अपनी भूख मिटाया करता हूँ।"

राक्षस विराध ने सीता को पकड़ लिया। सीता घबरा गईं और कांपने लगीं। राम बोले–"लक्ष्मण, अब क्या होगा ? क्या बनवास में हमें इसी तरह के कष्टों का सामना करना होगा !" वीर लक्ष्मण क्रोध में भरकर बोले–"भैया आप अभी मेरे बाणों का खेल देखेंगे।

मैं इस राक्षस को धूल चटा दूँगा।"

तभी विराध ने ललकार कर फिर पूछा–"अरे लड़को, तु चुप क्यों हो ? बतलाओ तुम कौन हो।"

अब तक राम संभल चुके थे। जोर से बोले–"हम सूर्यवंशी राजकुमार हैं। यह मेरी पत्नी है। बनवास का व्रत लेकर हम यहां आए हैं। तुम अपना परिचय दो ?"

विराध ने अट्टहास किया। बोला–"अच्छा, तुम मेरा परिचय जानना चाहते हो ? मेरे सामने कौन टिक सका है। मुझे ब्रह्मा से वर मिला हुआ है। खैर चाहते हो, तो यहां से भाग जाओ। इस युवती को मैं अपनी पत्नी बना लूंगा।"

राम का चेहरा तमतमा उठा। उन्होंने एक तीक्ष्ण बाण छोड़ते हुए कहा–"ले, तुझे यमलोक भेजता हूँ !"

पर बाण राक्षस के विशाल शरीर के आरपार हो गया। वह जैसे का तैसा खड़ा रहा। घायल होने के कारण उसका रोष और भी बढ़ गया। उसने सीता को छोड़ दिया और मुंह फाड़कर दोनों भाइयों पर झपट पड़ा। तभी राम और लक्ष्मण ने उस पर बाणों की वर्षा शुरू कर दी।

राक्षस फिर गरजा और उसने अंगड़ाई ली। उसके शरीर में बिंधे हुए सारे तीर गिर गए। जोर-जोर से हंसते हुए वह राम-लक्ष्मण की ओर बढ़ा। उन्हें पकड़ कर कंधों पर बैठा लिया। घने जंगल की ओर भागने लगा। यह देखकर सीता डर गईं और उनकी आंखों से आंसू गिरने लगे।

राम और लक्ष्मण ने उस राक्षस के दोनों हाथ धड़ से अलग कर डाले। राक्षस असहाय होकर गिर पड़ा। दोनों भाइयों ने लातों और मुक्कों से उस पर खूब प्रहार किए। पीड़ा के कारण विराध कराहने

लगा, पर मरा नहीं। तब विराध बोला–"भगवन्, अब मैं समझ गया आप कौन हैं। मैं राक्षस कुल में पैदा नहीं हुआ। मैं तो गंधर्व हूँ। शाप के कारण मुझे कोई मारकर मुक्ति नहीं दे सकता। मेरे टुकड़े-टुकड़े कर दीजिए और धरती में गाड़ दीजिए। बस, मैं अपने लोक पहुंच जाऊंगा।"

राम-लक्ष्मण ने ऐसा ही किया। इस तरह विराध गंधर्व लोक चला गया। विराध को मुक्ति देने के बाद दोनों भाई सीता के पास पहुंचे। उन्हें सारा हाल सुनाया। फिर वे आगे बढ़ चले।

श्रीराम ने न जाने कितने पापियों को मुक्ति दी।

राजकुमारी खो गई

एक था राजा। एक ही बेटी थी उसकी। राजकुमारी बहुत सुंदर थी, राजा की लाडली बेटी थी। हंसती तो जैसे फूल झड़ते, बोलती तो घंटियां टुनटुना उठतीं।

एक दिन राजकुमारी अचानक महल से गायब हो गई। कहीं कुछ पता नहीं चला। पहरेदारों ने केवल इतना कहा–"धुंए के बड़े-बड़े घेरे-से महल पर आए और राजकुमारी को उड़ा ले गए।"

राजा की तो दुनिया ही लुट गई। उसने डोंडी पिटवाई–"जो भी राजकुमारी को वापस लाएगा, उसे आधा राज्य दिया जाएगा।" कई बहादुर युवक हाजिर हुए। जहां-तहां उन्होंने दौड़-धूप भी की, पर यही पता न लगा कि राजकुमारी गई तो किधर गई।

कई दिन बाद एक युवक राजा से मिलने आया। उसके पास बड़ा-सा पुखराज था। वह बोला–"महाराज, इसमें देखिए। राजकुमारी जहां है, आपको दिख जाएगी। राजा को विश्वास नहीं हुआ। फिर भी उसने बेमन से पुखराज में देखा। राजा के उदास चेहरे पर खुशी झलक उठी।

"दिख गई, हां, मेरी बेटी दिख गई। चार मीनारों के इस महल में वह उदास है। राक्षस की कैद में है।"–राजा बोल उठा।

पर यह महल किसका है ? कहां है–किसी को पता नहीं। बहुत खोजबीन करने पर सबसे बूढ़े दरबारी ने बताया–"महाराज, ऐसा महल है मलंग राक्षस का।"

राजा ने तय किया कि वह तुरंत अपनी फौज के साथ उस महल को घेर लेगा।

"पर वहां तक पहुंचने में ही पूरा एक बरस लग जाएगा। बहुत दूर है यह महल"–दरबारी बोले–"उड़ने वाला घोड़ा हो, तो शायद दो-तीन दिन में पहुंचा जा सकता है।"

बस, फिर डोंडी पिटवाई गई–"जिसके पास उड़ने वाला घोड़ा हो, वह दरबार में हाजिर हो। राजकुमारी को लाएगा, तो आधा राज्य पाएगा। राजकुमारी का विवाह भी उसी से होगा।"

जादुई घोड़े पर सवार एक सुंदर युवक आया। उसने पुखराज में देखा। बोला–"मैं तो तीन दिन में वहां पहुंच जाऊंगा।" सुनकर राजा खुश हो गया, पर दूसरे ही क्षण फिर उदास। राक्षस को कौन मारेगा ? मलंग राक्षस पर किसी हथियार का कोई असर न होता, हां लंगड़े देव की जादुई गदा हो, तो उसे मारा जा सकता है।

बहुत खोजबीन की गई राजा ने कहा कि जादुई गदा से जो राक्षस को मारेगा, राजकुमारी को लाएगा, उसे आधा राज्य मिलेगा। राजकुमारी का पति भी वही बनेगा।

एक युवक लंगड़ेदेव की जादुई गदा लेकर आया। तीनों युवक जादुई घोड़े पर सवार हो गए। पुखराज में देखते हुए, राह खोजते-खोजते मलंग राक्षस के महल में जा पहुंचे। उस अनोखी गदा से राक्षस तो ऐसे मर गया, मानो मच्छर हो।

तीनों युवक राजकुमारी को लेकर राजा के पास लौट आए। राजा की खुशी का ठिकाना नहीं। सारे राज्य में रोशनी की गई। पर एक

नई उलझन खड़ी हो गई। राजकुमारी का विवाह किसके साथ हो ? राज्य किसे मिले ? अब तीनों युवक झगड़े पर उतारू थे।

राजा ने कहा–"तुम तीनों ने ही मुझ पर भारी एहसान किया। राज्य के तीन हिस्से मैं करता हूँ। तीनों को एक-एक हिस्सा मिलेगा। पर राजकुमारी... राजकुमारी तुममें से जिसे चाहेगी, उसी से उसका विवाह हो जाएगा।"

ऐसा ही किया गया। तीनों युवकों को राज्य मिला, एक को राजकुमारी।

राजा ने अपने निर्णय से बता दिया था–झगड़े से राह नहीं मिलती। आपस में मिल-बैठकर हम सुख पा सकते हैं।

कुआँ नहीं सूखता अब

एक गांव था झांझरपुर। गांव रेगिस्तानी इलाके में था। गरमी के दिन होते तो खूब गरमी पड़ती और ऊपर से पानी की किल्लत भी हो जाती। एक ही कुआँ था।

इस बार भी ऐसा ही हुआ। गरमी, धूल उड़ाती कड़क गरमी पड़ी। किसनू अपने मालिक के लिए पानी ढो-ढोकर लाया करता। पर कुएं में तो पानी की जगह कीचड़ ही कीचड़ नजर आने लगी।

किसनू ने मालिक को बताया। झांझरपुर के और लोग भी इसी उधेड़-बुन में थे। कुआँ तो सूख ही गया समझो। भरे हुए पानी से जैसे-तैसे दो-चार दिन काम चल जाए, पर फिर क्या होगा ?

उस रात किसनू करवटें बदलता रहा। वह सोच रहा था कि गांव वाले आखिर कब तक प्यासे रह सकेंगे ? क्या मालिक के बच्चे प्यास से दम तोड़ देंगे ? किसी ने उसे बताया था कि दक्षिण दिशा में समंदर है। वहां अथाह जल है एकाएक उसके दिमाग में विचार कौंधा–"क्या समंदर का पानी गांव तक नहीं लाया जा सकता ?"

वह उठ बैठा। बिना किसी से कुछ कहे, चल पड़ा। चलता गया, चलता गया। पर समंदर इतना पास तो न था। सवेरा हुआ, फिर भी रुका नहीं। धूप चढ़ आई, तो उसे लगा कि वह भूखा है, प्यासा भी

है। तभी उसे एक बूढ़ा मिला। वह बैठा था। उसके आगे कुछ खिलौने फैले थे। वह हाथ के इशारे करता, खिलौने चलने लगते-कभी आगे, कभी पीछे।

किसनू उसे देखने लगा। देखता रहा। बूढ़ा बोला–"कौन हो, कहां से आए, कहां जाना है ?" किसनू झट से बोला–"बाबा, झांझरपुर का हूँ। समंदर लाने निकला हूँ।"

बूढ़े ने ठहाका लगाया–"अरे समंदर क्या यों आता है ? फिर उसका नमकीन पानी भला किसकी प्यास बुझा सकता है ?"

किसनू करे तो क्या करे ? बूढ़ा बोला–"तू भूखा है, तो खाना खा, प्यासा है पानी पी। मेरे पास रह और काम-धंधा कर। गांव की चिंता छोड़।" कहकर बूढ़े ने हाथ हिलाए। वहां झील नजर आने लगी। झील में कमल खिले थे।

किसनू ने दोनों हाथों में पानी ले लिया। पीना ही चाहता था कि आंखें भर आईं। आंखों से टप-टप आंसू गिरने लगे। बूढ़े ने पूछा–"रोता क्यों है ?"

किसनू बोला–"बाबा, गांव में लोग मुसीबत में हैं। बच्चे भी प्यासे होंगे।"

–"अरे बावले, तूने क्या गांव का ठेका ले रखा है ? और लोग भी तो हैं।"

पर किसनू का मन हलका न हुआ। सुबकने लगा। बाबा बोला–"तू दो बाल्टी पानी ले जा। उसे कुएँ में डाल देना। बस, फिर तेरे गांव में हमेशा पानी मिलेगा।"

"ऐं, क्या कहा बाबा, तुमने। गांव में पानी की मुसीबत न रहेगी।"–किसनू बाबा के पांवों से लिपट गया। बूढ़े ने उसे दो

बाल्टियां दे दीं। बोला–''इन्हें भरकर ले जा। पर जब तक गांव के कुएँ में यह पानी न डाल दे, इनमें से पानी पीना मत। पी लिया, तो बाकी पानी भाप बनकर उड़ जाएगा।''

किसनू झट-से पानी भरी बाल्टियां लेकर, चल दिया। थोड़ी दूर चला था कि प्यास से बेहाल हो गया, लेकिन बूढ़े ने तो पानी पीने को मना कर दिया था।

पसीने से लथपथ, प्यास से बहुत परेशान पर रुके कैसे किसनू ? वह किसी तरह गांव के कुएँ तक जा ही पहुंचा। उसने बाल्टियां कुएँ में उलट दीं और बेहोश होकर गिर पड़ा। कुएँ में पानी लबालब हो गया। गांव वाले वहां आए। किसनू को वे चेत में लाए। अब वह कुआँ कभी नहीं सूखता।

आलसी अलादीन का दीपक

दर्जी का लड़का था अलादीन। बड़ा आलसी। बाप चल बसा, अलादीन और भी आलसी हो गया। मां की मदद न करता। एक अफ्रीकी जादूगर वहां आया। उसने सोचा कि अलादीन जमूरे का काम तो कर ही सकता है। बोला अलादीन से–"मैं तेरा चाचा हूँ। बहुत दिनों पहले परदेस चला गया था। अब लौटा हूँ। तू मेरे साथ रहेगा, तो मौज करेगा।"

वह जादूगर अलादीन को शहर से दूर ले गया। वहां गुफा के दरवाजे से पत्थर हटाया। बोला–"बेटे अलादीन, ले यह जादुई अंगूठी और चला जा भीतर। डरियो मत। मुसीबत में अंगूठी तेरे काम आएगी। गुफा के भीतर एक जादुई चिराग है, वह ले आ। फिर तुझे मालामाल कर दूँगा।"

अलादीन गुफा में उतर गया। वहां हीरे-मोती का अकूत खजाना था। उसने अपनी सारी जेबें भर लीं। पुराना जादुई चिराग भी ले लिया। पर जादूगर चाचा तो चालाक था। उसने चिराग मांगा, तो अलादीन ने नहीं दिया। बोला–"मुझे बाहर तो निकालो, तभी दूँगा यह चिराग।"

जादूगर ने अलादीन को गुफा में ही बंद कर दिया। बोला–"अब

तू बाहर नहीं निकल पाएगा।"

अलादीन गुफा में बैठा-बैठा परेशान। तभी उसे अंगूठी का ध्यान आया। उसने अंगूठी को रगड़ा, तो तुरंत जोरदार आवाज हुई। अंगूठी का जिन्न आ खड़ा हुआ। बोला–"मालिक, हुक्म दो मुझे।"

पहले तो अलादीन घबराया। फिर बोला–"अरे, भई ! मुझे गुफा से बाहर तो निकालो।"

"जो हुक्म मेरे मालिक।"–जिन्न बोला।

क्षण भर बाद ही अलादीन गुफा से बाहर था। वह घर पहुंचा। पुराना-सा चिराग लेकर। मां बोली–"ला बेटा, मैं इसे साफ कर दूँ।"

चिराग को रगड़ना था कि जोरदार धमाका हुआ। इस बार अंगूठी वाले जिन्न से भी अधिक जबर्दस्त जिन्न हाजिर हो गया। बोला–"मुझे हुक्म दो मेरे मालिक। मैं इस चिराग को रगड़ने पर हाजिर हो जाता हूँ। कोई भी काम मेरे लिए असम्भव नहीं।"

मां-बेटा दोनों भूखे थे। जिन्न से कहा तो पलक झपकते ही उसने तरह-तरह के पकवान-मिठाइयों का ढेर लगा दिया।

कुछ ही दिनों में अलादीन खूब मालदार हो गया। उसने सुल्तान और शहजादी के लिए बेशकीमती उपहार भेजे। फिर शहजादी से शादी कर ली। शानदार महल में रहने लगा।

जादूगर को पता चल गया था कि अलादीन तो गुफा से बच निकला। जादुई चिराग की बदौलत मौज से दिन काट रहा है। उसके तन-बदन में आग लग गई। उसने भेस बदला और अलादीन के महल के चक्कर लगाने लगा। एक दिन अलादीन कहीं गया हुआ था। जादूगर आवाज लगाने लगा–"पुराने चिराग के बदले, नया ले लो।"

अलादीन की बीवी ने सोचा कि पुराना चिराग देकर क्यों न नया

ले ले। उसे करामाती चिराग के बारे में कुछ भी पता न था। बस, उसने जादुई पुराना चिराग दे दिया और नया ले लिया। अब क्या था, जादूगर ने चिराग रगड़ा। जिन्न हाजिर हुआ। उसे हुक्म दिया–''ले चल महल और शहजादी को अफ्रीका में दूर देश।''

जिन्न तो उसी का हुक्म बजाता जो चिराग रगड़ता। जादूगर, महल और शहजादी वहां से बहुत दूर जा पहुंचे। जब अलादीन लौटा, तो हक्का-बक्का सब कुछ छूमंतर हो गया था। अलादीन ने हार नहीं मानी। अंगूठी के जिन्न की मदद से जादूगर के देश में जा पहुंचा। गुपचुप शहजादी से मिला। उसे सब कुछ बताया और उसकी मदद से जादूगर को खूब पटखनी दी। इसके बाद शहजादी और अलादीन सुख से रहे'

सैकड़ों साल पहले अरब देशों में ऐसे किस्से खूब गढ़े गए। बगदाद का नाम दुनिया भर में लिया जाता था। कहां है वह जादुई चिराग, जो दुनिया को शांति दे।

गले का हार

एक राजा थे अचलसेन। एक बार शिकार खेलने गए, तो दिन ढल गया, पर कुछ हाथ न आया। राजा थक गए, तो तम्बू में आराम करने लगे। तभी उनके लश्कर के दो आदमी एक मृगछौना लेकर हाजिर हुए।

छौना आगे आया और राजा के तलवे चाटने लगा। राजा अचलसेन ने देखा कि उसकी आंखों में आंसू हैं। उन्होंने आदेश दिया–"इसे नरम-नरम दूब दी जाए। अगले दिन सवेरे राजधानी जाते समय इसे साथ ले जाया जाए।"

मृग छौने को राजमहल में ही रखा गया। उसकी खूब खातिर होती। अच्छे से अच्छा खाने को दिया जाता। वह राजमहल में मनमाने ढंग से घूमता। हां, एक काम वह हमेशा किया करता–सवेरे ही राजा के शयन कक्ष में पहुंच जाता। सोते हुए राजा के पांवों पर से धीरे-से चादर खींचने लगता। फिर राजा के पांवों को चाटने लगता।

अचलसेन जाग जाते। वह छौने पर हाथ फिराते। दासियाँ उसके लिए खीर, हलवा या ऐसी ही कोई चीज लेकर आतीं।

समय बीतता गया। छौना बड़ा हो गया। बड़े-बड़े सींग निकल

आए। पूरा हिरन बन गया। लेकिन राजा को वह अब भी जगाया करता। पर उसका स्वभाव उग्र होता गया। उसके सींग कई बार झंझट खड़ा कर देते। उसने कई कीमती कांच के बर्तनों को गिरा दिया। वे खील-खील होकर बिखर गए। पर राजा के प्रिय हिरन को कोई कुछ कहे, तो कैसे।

एक दिन वह हिरन रसोई घर में घुस गया। उसने कुछ खाया, कुछ खिंडाया। रसोइए को फिर से भोजन पकाना पड़ा। राजा को भोजन परोसने में देर हो गई, वह नाराज हुए तो हिरन की करतूत उनके सामने बयान की गई।

राजा ने तुरंत आदेश दिया कि इस उद्दण्ड हिरन को जंगल में छोड़ दिया जाए। पर उन्होंने उदारता भी बरती। उसके गले में एक हार पहना दिया। आदेश दिया कि इसे राजसी हिरन माना जाए। कोई भी मारे नहीं। हिरन जंगल में घूमता-फिरता। पर उसकी आदतें तो राजसी टाट-बाट से बिगड़ी हुई थीं। वह अन्य हिरनों को तंग किया करता। अन्य पशुओं के छोटे-छोटे बच्चों के प्रति क्रूरता दिखाता। जंगल के हिरन ही नहीं, दूसरे जीव-जंतु भी उससे बहुत खीज उठे। एक दिन कुछ हिरनों ने मिलकर उसे घेर लिया। उसे ठेलते हुए ले चले और दलदल में धकेल दिया। इस बीच राजा का हार भी टूटकर बिखर गया।

हिरन बहुत हाथ-पैर मारता रहा, पर बाहर न निकल सका। संयोग की बात, उस दिन अचलसेन उधर से गुजरे। रोते-मिमियाते हिरन की आवाज उन्होंने सुनी। जैसे-तैसे उन्होंने उसे बाहर निकलवाया। सेवकों ने कहा कि यह तो राजमहल वाला हिरन ही है। राजा बोले–"पर इसका हार कहां है ?"

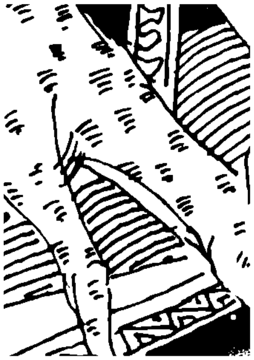

हिरन की आंखों में आज फिर आंसू थे। धीरे-धीरे वह आगे आया और राजा के पांव चाटने लगा। खोजबीन करने पर राजा को सब पता चल गया। उन्होंने कहा कि वह इसे फिर से राजमहल ले जाएंगे। इस बार इसे खुले घूमने की छूट न देंगे, बल्कि राजसी उद्यान के बाड़े में रखेंगे।

बहुरंगी बालोपयोगी कविताएँ

बन्दर बाँट	बच्चन
नीली चिड़िया	बच्चन
जन्मदिन की भेंट	बच्चन
निंदिया आ जा	अमृतलाल नागर
हुआ सवेरा उठो उठो	सोहनलाल द्विवेदी
हम बालवीर	सोहनलाल द्विवेदी
सुनो कहानी	सोहनलाल द्विवेदी
अगर-मगर	निरंकारदेव सेवक
आज़ादी के गीत	निरंकारदेव सेवक
चाचा नेहरू	विष्णुकांत पाण्डेय
आओ करें सवारी	रामचन्द्र तिवारी
अपना देश	रामचन्द्र तिवारी
खेलें कूदें नाचें गायें	धर्मपाल शास्त्री
फूल खिले हैं डाली-डाली	रुद्रदत मिश्र
यह धरती बलिदान की	राष्ट्रबंधु
कहावतों के गीत	रत्नप्रकाश 'शील'
सुनाओ नानी एक कहानी	धर्मपाल गुप्ता

ISBN 93-80300-12-3
9789380300122

नया साहित्य